जल संकट से बचने के लिए अनिवार्य है जल संरक्षण

(पौराणिक काल से वर्तमान परिप्रेक्ष्य में)

डॉ. दीपक डोभाल

प्रदूषित जल के दुष्प्रभाव से मानव स्वास्थ्य के अतिरिक्त जलीय जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों पर भी प्रभाव पड़ा है। अवसादी प्रदूषण के कारण नगरीय एवं औद्योगिक क्षेत्रों के गादों में विद्यमान कार्बनिक एवं अकार्बनिक रसायन भारी धातुकण एवं अम्ल आदि विषैले रसायन जल में मिल रहे हैं जिससे जल की गुणवत्ता में गिरावट आ रही है। मानव एवं जलीय जीवों का अस्तित्व खतरे में पड़ता जा रहा है।

सृष्टि के आरम्भ या पौराणिक काल में क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर आदि पांच आधारभूत तत्वों को मिलाकर प्रकृति की रचना हुई है। इन्हीं पंच तत्वों में यदि किसी भी तत्व की कमी प्रकृति में होती है तो वह सृष्टि के अस्तित्व के लिए खतरनाक या संकटग्रस्त हो जाएगी। इसमें जल भी एक महत्वपूर्ण तत्व है। पौराणिक ऋषि-मनीषियों ने इस जल को जीवन का अमृत बतलाया है। जल के बिना जीवन की कल्पना करना असंभव है। अतः जल ही जीवन का आधारभूत तत्व है। प्राचीन काल से ही मानव सभ्यताओं का विकास नदी-घाटियों एवं जल स्रोतों के निकट ही संभव हो पाया है। इतिहास भी साक्षी है कि दुनिया की महान सभ्यताओं में 1500 ई. पूर्व आर्यों ने भारत में प्रवेश करते समय सिन्धु नदी के तटवर्ती क्षेत्र को अपना निवास स्थान बनाया तथा मिस्र की मानव सभ्यता ने नील नदी के तटवर्ती क्षेत्र को अपने आवास योग्य स्थान बनाया। इसके अतिरिक्त अन्य मानव सभ्यताएं आज भी नदी-घाटियों एवं जल स्रोतों के निकट ही विकसित हुई हैं। पृथ्वी का 75 प्रतिशत भाग जल से आच्छादित है। यह जल नदी, तालाबों, ग्लेशियरों, झीलों (कृष्णा, कावेरी, नर्मदा, ताप्ति, गोदावरी, गंगा, यमुना, भागीरथी आदि नदियों) सागरों एवं महासागरों के रूप में चारों ओर फैला हुआ है। इसी जल का आज मानव ने अपने विविध कार्यों जैसे पेयजल, सिंचाई, पशुपालन, परिवहन, उद्योग, जल विद्युत एवं मत्स्यपालन आदि में व्यापक विदोहन किया है जिसके कारण औद्योगिकरण एवं नगरीय क्षेत्रों के विस्तारिकरण से जल प्रदूषित हो रहा है और पेयजल की समस्या बढ़ती जा रही है। आज मानव जल की सुचिता एवं महत्व को नही समझ सका है।

पौराणिक काल में ऋषि-मनीषि जल की शुद्धता से भली-भांति परिचित थे। उन्हें पता था कि किस प्रकार सबको शुद्ध करने वाला जल कैसे शुद्ध होता है। सर्वप्रथम सूर्य के वाष्पीकरण की प्रक्रिया में जल आकाश में पहुंचता है। वहां से वर्षा के रूप में बरसता है -

जलाभाव के कारण इंसान प्रदूषित जल पीने को मजबूर

यथाः- अमूर्या उप सूर्ये याभिर्वा सूर्यः सहः ता नो हिन्वन्त्वरम्रः

ऋग्वेद- 9/23/99

अर्थात् जो जल सूर्य या सूर्य की किरणों में समाहित है अथवा जिन जलों के साथ सूर्य का सानिध्य है। ऐसे वे जल पवित्र होकर हमारे यज्ञ में उपलब्ध हो। इस ऋचा के अनुपालन में इतनी सुव्यवस्था थी कि आज भी इसका अनुपालन होता है। सूर्यार्घ्य देने की परम्परा इसलिए है कि - हे सूर्यदेव आपकी रश्मियां इस जल को ग्रहण करें। इस जल को वहां तक पहुंचाएं जिन चर-अचर जीव-जंतुओं और वनस्पतियों तक पानी नहीं पहुंच पाया है। जिन्हें जल की अति आवश्यकता है। आप इस जल को वर्षा द्वारा उन तक पहुंचाएं। जिससे चर-अचर जगत में शांति प्राप्त हो। अथर्ववेद में जल की शुद्धता का वर्णन करते हुए कहा गया है कि -

आपो अस्मान मातरः सूदयन्तु घृतेन नो घृतप्व पुनन्तु।
विश्वंहि रिप्रं प्रवहन्ति देवी रूदिदाभ्यः सुचिरापूत एमि।।

अथर्ववेद - 6/51/2

अर्थात् मातृवत पोषक जल हमें पावन बनाए। घृत रूपी जल हमारी अशुद्धता का निवारण करे। जल की दिव्यता अपने दिव्य स्रोतों से सभी पापों का शोधन करें। जल से शुद्ध एवं पवित्र बनकर हम ऊर्ध्वगामी हो।

वर्तमान में मानव द्वारा जल संसाधनों के अति दोहन से पृथ्वी के जल भंडार क्षीण होते जा रहे हैं। हमारे देश में काफी वर्षा होने के बावजूद भी जल संकट ज्यों का त्यों बना हुआ है। इसके लिए वर्षा जल का संचयन करके उसे समुचित उपयोग में लाया जाए। यह वर्षा जल, जल का प्राथमिक स्वरूप एवं जल का प्राथमिक स्रोत है जो कि जल चक्र को बनाए रखता है। नदियां, झीलें, भूमिगत जल आदि द्वितीयक स्रोत हैं जो कि प्राथमिक स्रोत पर निर्भर रहकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर रहे हैं और प्राथमिक स्रोत की उपेक्षा कर देते हैं। जबकि प्राथमिक स्रोत ऐसा स्रोत है कि जो हमें विशुद्ध अलवणीय, मृदु एवं स्वच्छ जल प्रदान करता है। यह जल अनेक रोगों का नाशक माना गया है। ऋग्वेद में ऐसे जल के बारे में कहा गया है कि -

आप इद्वा उ भेषजीरापों अमीवचातनीः। आपः सर्वस्य भेषजीस्ता स्तकृण्वन्तु भेषजम्।।

ऋग्वेद- 10/139/6

अर्थात् शुद्ध जल अनेक रोगों का निवारण करता है। जल ही रोगों के मूल का नाश करने वाला है। यह जल अभीष्ट फलदायक एवं अनेक प्रकार से रोगों का शमन करने वाला है। जल में रहने वाले दृश्य एवं अदृश्य सभी प्रकार के विषैले एवं विषरहित जीवों के विषों को यह शुद्ध जल एक औषधि के रूप में नष्ट कर देता है। अथर्ववेद में कहा गया है कि -

आप इद् वा उ भेषजीरापों अमीव चातनीः।
आपो विश्वस्य भेषजीस्तास्त्वा मुचन्तु।।

अथर्ववेद- 3/9/5

वैदिक काल में ऋषि-मनीषियों ने माना कि यह शुद्ध जल समस्त रोगों की औषधि है। स्नान-पान द्वारा यह जल एक औषधि के रूप में समस्त रोगों को दूर करता है। जो अन्य औषधियों की भांति किसी एक रोग की नहीं बल्कि समस्त रोगों की औषधि है। हे रोगिन, ऐसे जल से तुम्हारे सभी रोग दूर हों। अतः शुद्ध जल या नदियों का जल अनेक रोग-व्याधियों को नष्ट करने वाला होता है। इसलिए प्राचीन काल से ही शुद्ध जल या गंगा जल में स्नान आदि करने की परम्परा रही है जो हमारी मानसिक, शारीरिक व्याधियां दूर कर हमें स्वस्थ्य एवं सुखी जीवन प्रदान करती है। यह स्वच्छ जल हमें सद्वृत्तियों की ओर प्रेरित करता है। ऋग्वेद में कहा गया

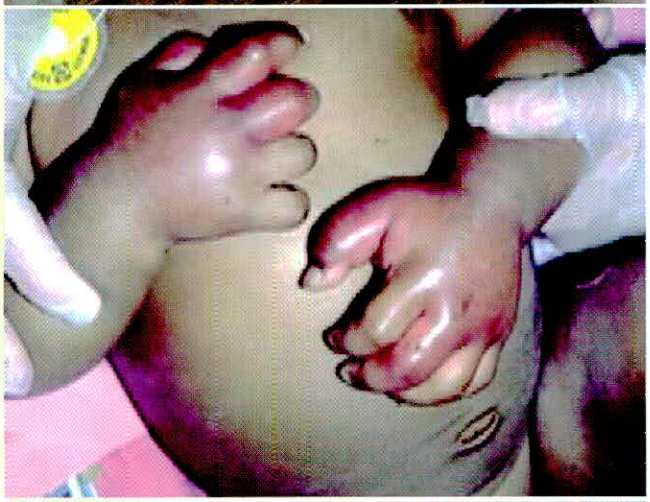

जल में आर्सेनिक, फ्लोराइड, नाइट्रेट इत्यादि की मात्रा बढ़ने के कारण होने वाली व्याधियां

है कि -

इदमाप प्र वहत यत्कि च दुरितं मयि। यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेष उतानृतम्।।

ऋग्वेद- 9/23/22

हे जल देवों! हम याचकों ने अज्ञानवश जो दुष्कृत्य किये हों - जानबूझकर किसी से द्वेष किया हो, सत्पुरूषों पर आक्रोश किया हो या असत्य का आचरण किया हो तथा इस प्रकार के हमारे जो भी दोष हों, उन सबको दूर करें। इस मंत्र से यह भी स्पष्ट होता है कि जल में स्नान पाप शामक भी है। इसलिए आज संपूर्ण हिन्दू समाज नदियों में स्नान करने जाता है। इससे सिद्ध होता है कि स्नान आदि करने से जल सद्बुद्धि

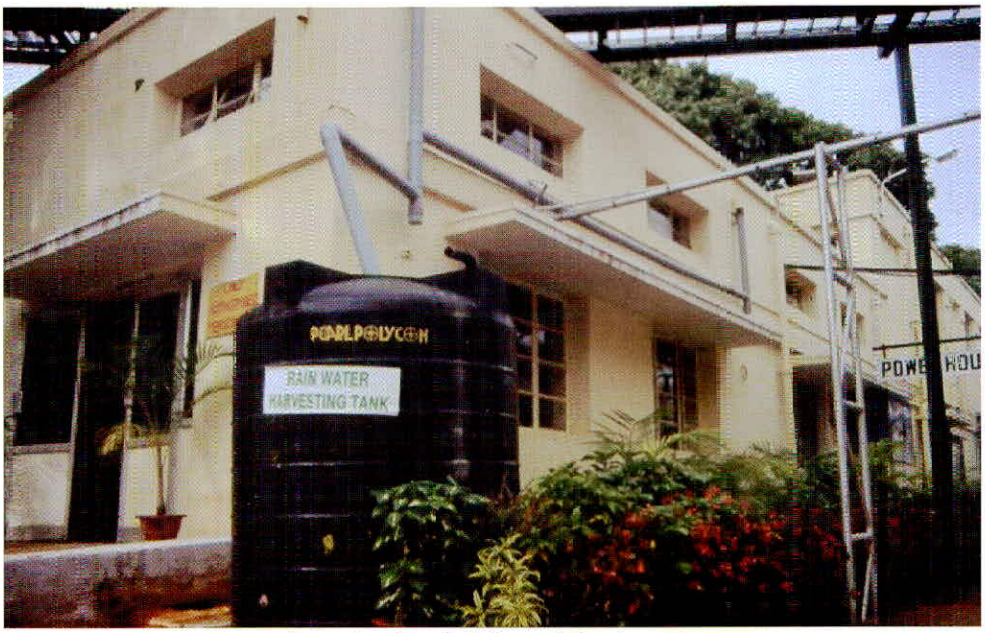

भावी जल संकट से बचने के लिए जरूरी है वर्षा जल संचयन

पानी की हर बूंद कीमती है, इसे बचाएं

की ओर प्रेरित करने वाला होता है। ऐसे जल की प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि -

आपो मौषधीमतीरेतस्या दिशः पान्तु।

अथर्ववेद- 19/19/6

अर्थात् औषधि युक्त जल हमारा संरक्षण करे एवं हमें सद्वृत्तियों की ओर प्रेरित करे। हिमाच्छादित पर्वतों से जो जल धाराएं आगे प्रस्थान करती हैं उनके बारे में अथर्ववेद में वर्णन है कि -

हिमवतः प्रसवन्ति सिन्धौ समह संगमः। आपो ह महां तद् देवीर्ददन् हृदघोत भेषजम्।।

अथर्ववेद- 6/24/1

अर्थात् हिमाच्छादित पर्वत शिखरों से जो जल धाराएं बहती हुई समुद्र की ओर प्रस्थान कर रही हैं वे रोगनाशक अमृतमय औषधिय जल धारा हृदय को शांति प्रदान करने वाली होती हैं क्योंकि हिमालयी क्षेत्र में अनेक प्राणरक्षक औषधियां पायी जाती हैं जिनसे अनेक असाध्य रोग कुष्ठ आदि दूर हो जाते हैं। इन औषधिय तत्वों से युक्त जल से घोर अपराध, पाप, रोग एवं शोक सभी दूर चले जाते हैं। ऐसा अमृतोपम जल सोमरस कहलाता है। विभिन्न हिन्दू धार्मिक अनुष्ठानों के सुअवसर पर पूजापाठ या तांत्रिक अनुष्ठान सभी में सोमयुक्त शुद्ध गंगाजल प्रयुक्त किया जाता है। दिव्य गुणों से युक्त यह जल हमारे लिए कल्याणकारी है। इस जल का पान करते हुए हमें अभिष्ट आनन्द और शांति प्राप्त हो। जल की वृष्टि के लिए यज्ञ का प्राविधान है। इसी संदर्भ में यजुर्वेद में कहा गया है कि -

वसोः पवित्रमसि शत धारं वसो पवित्रमसि सहस्त्रधारयः।

यजुर्वेद- 9/3

अर्थात् इस मंत्र का आशय है कि पृथ्वी का प्रत्येक प्राणी अपने शरीर से मल-मूत्र विसर्जन करता है, यही मल-मूत्र नदी, तालाबों, से होकर समुद्र में पहुंचता है तथा कुछ भाग पृथ्वी पर रह जाता है। सूर्य के ताप से इन सब मल-मूत्रों का जलीय अंश पृथ्वी, नदी, तालाब एवं समुद्र से वाष्प बनकर उड़ जाता है और अंतरिक्ष में संग्रहित होता है। यही जल हमें वर्षा के द्वारा प्राप्त होता है। यज्ञाग्नि में पौष्टिक, सुगन्धित, रोगनाशक, औषधियों की आहुतियां दी जाने से उत्पन्न वाष्प एवं गैस अंतरिक्ष में पहुंचती है। जो वहां विद्यमान जल के दूषित परमाणुओं का विनाश करती है और जल को पौष्टिक, शुद्ध एवं रोगनाशक बनाती है। यही शुद्ध जल जब वर्षा के द्वारा भूमि पर आता है तो उसकी सुरक्षा हेतु कठोर नियमों का पालन होता था। यथा -

नाप्सु भूतं पुरीषं वाष्टो वनं समुत्सृजेत। अभेध्य लिप्त मन्यद्वा लोहितं वा विषाणि वा।।

मनुस्मृति- 4/56

अर्थात् पानी में मल-मूत्र, अन्य दूषित पदार्थ, रक्त अथवा विष का विसर्जन न करें। इसके लिए ऋषियों ने अखिल ब्रहमाण्ड से व्यक्ति का रिश्ता जोड़ते हुए बतलाया है कि-

धौर्व पिता पृथिवि माता सोमा भ्राता दितिस्वसा।
अदृष्टा विश्वदृष्टस्तिष्ठेतेलयता सु कम।।

ऋग्वेद-1/19/6

अर्थात् आकाश को पिता, पृथ्वी को माता, चन्द्रमा को भाई तथा अखण्ड प्रकृति को बहन तुल्य प्रेम एवं सौहार्द देना चाहिए। प्रत्येक महापुरूष, चाहे वह किसी भी पंथ का रहा हो, उसने भी प्रकृति के महत्व को स्वीकार किया। इसी परिप्रेक्ष्य में भगवान महावीर स्वामी जी प्रकृति के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त करते हुए कहते है कि "जहां-जहां जब भी मैं जमीन आदि खोदता हूं, अकारण दल, फल, फूलों को तोड़ता हूं। तलवार, धनुष आदि हथियार चलाता हूं। अग्नि विष आदि का प्रयोग करता हूं, इन्हें दूसरों को देता हूं। यह सब हिंसा के कार्य है। मेरा संकल्प है कि मैं इन्हें

मानव और पशु दोनों के लिए पानी का संरक्षण जरूरी है

ऐसे भी जल संरक्षित कर सकते है

त्याग दूं।

इस प्रकार प्राचीन काल में ऋषि-मनीषियों एवं संत-महात्माओं ने भी प्रकृति एवं जल का अनावश्यक रूप से उपभोग करना अपराध की तरह माना है और जन-जन को यह संदेश दिया है कि प्रकृति के स्वरूप एवं जल को व्यर्थ में उपभोग नही करना चाहिए। उन्हें अपना सगा-संबंधी माता-बहिन एवं पुत्रवत् स्वरूप समझकर स्नेह एवं प्रकृति प्रेम करना चाहिए। लेकिन आज मानव प्रकृति के महत्व को नकार रहा है जिसके परिणामस्वरूप प्रकृति एवं जल के दूषित होने से जमीन में उगने वाली अनेकों प्रकार के पुष्प, फल, साग, सब्जियां एवं वनस्पतियां प्रभावित होकर उपयोग के लायक नहीं रही हैं। जल की ऐसी दशा हो गयी है कि जिस गंगा जल को वेदपुराणों में 'गंगा माता' तथा 'गंगा तेरा पानी अमृत' की संज्ञा दी गयी है, आज उसी के पुत्रों ने गंगा माता को इतना मैला अथवा दूषित कर दिया है कि कल-कारखानों से निकलने वाला अवशिष्ट पदार्थ, शहरों की समस्त गंदगी एवं मल-मूत्र की पाइपलाइनें, मरे हुए पशु, मृत मानव देह तथा सड़ा गला कूड़ा-कचरा आदि को गंगा में खुला बहा दिया है जिससे गंगा जल विशाक्त एवं जहरीला हो चुका है। धार्मिक मान्यता के अनुसार जिस गंगा जल में कीड़े नहीं पड़ते थे, उस गंगा जल को हाथ में आचमन करते समय कीड़े नजर आने लगे है। गंगा के समीपवर्ती तालाबों, नहरों, कुओं एवं नलकूपों का पानी भी पीने योग्य नही रहा। गंगा घाटी के निकट बसने वाली पैंतीस करोड़ की मानव आबादी का स्वास्थ्य एवं जीवन दूषित जल के कारण खतरे में पड़ चुका है। इस दूषित जल से अनेकों प्राणघातक बीमारियां उत्पन्न हो रही हैं। जल में पारा की मात्रा बढ़ जाने से मिनीमाता रोग, नाइट्रेट की अधिकता से ईटाई-ईटाई रोग, आर्सेनिक की मात्रा अधिक होने से ब्लैकफुट रोग, फ्लोराइट की मात्रा से फ्लोरोसिस रोग उत्पन्न हो रहा है। पीने के पानी में बैक्टिरिया की मात्रा होने से हैजा, तपेदिक, पीलिया, अतिसार, मियादी ज्वर, पैराटाइफाइट एवं पेचिस आत्रंशोध आदि संक्रामक बीमारियां उत्पन्न हो रही हैं। वर्तमान में पीने योग्य स्वच्छ एवं शुद्ध जल नहीं मिलने से जल संकट गहराता जा रहा है।

प्रदूषित जल के दुष्प्रभाव से मानव स्वास्थ्य के अतिरिक्त जलीय जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों पर भी प्रभाव पड़ा है। अवसादी प्रदूषण के कारण नगरीय एवं औद्योगिक क्षेत्रों के गादों में विद्यमान कार्बनिक एवं अकार्बनिक रसायन भारी धातुकण एवं अम्ल आदि विषैले रसायन जल में मिल रहे हैं जिससे जल की गुणवत्ता में गिरावट आ रही है। मानव एवं जलीय जीवों का अस्तित्व खतरे में पड़ता जा रहा है।

आज आवश्यकता इस बात

की है कि समस्त मानव जाति में जल समस्या को लेकर जन चेतना जागृत की जाए। उन्हें जल के महत्व को गहनता से बताना होगा कि जल ही मानव जीवन के लिए अमूल्य निधि है तथा जल के बिना जीवन की कल्पना करना असंभव है क्योंकि आज मानव ने अपनी भौतिक सुख-सुविधाओं एवं अनियंत्रित आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जल संसाधनों का बेरहमी और अंधाधुंध तरीके से विदोहन करना आरम्भ कर दिया है। सामान्यतः जन धारणा यह रही है कि धरातल के नीचे जल भण्डार असीमिति है और हम जल की जितनी मात्रा ग्रहण करते हैं उसे किसी न किसी रूप में निर्मुक्त कर देते हैं। इससे हमें भूमिगत जल हमेशा सुलभ होता रहेगा। यही मानव धारणा यहां पर गलत साबित होती है क्योंकि भूमिगत जल भण्डार असीमित मात्रा में न होकर केवल सीमित मात्रा में पाए जाते हैं। हम उपयोग के बाद जितना जल धरातल पर निर्मुक्त करते हैं, वह नदी-तालाबों, नालों से होकर सागर में पहुंच जाता है। वन क्षेत्रों की बेतहाशा कटाई भी इसके लिए जिम्मेदार है, क्योंकि पेड़-पौधों की जड़ों से धरातल का पानी भूमिगत स्रोतों में संचित होता रहता है लेकिन आज मानव ने अपनी सुख-सुविधाओं के क्षण मात्र के लिए वनों एवं पेड़-पौधों को काटकर विशालकाय रेत-कंकरीट की इमारतें खड़ी कर दी हैं जिससे वर्षा ऋतु में जल नदियों, नहरों एवं नालों से बहकर सागर में पहुंच जाता है। स्थानीय भूमिगत जल स्रोतों में जल की पर्याप्त मात्रा न होने के कारण स्रोत सूखते जा रहे हैं। भूजल स्तर लगातार गिरता जा रहा है, जोकि गंभीर जल संकट का संकेत है। यदि हम भावी जल संकट से उभरना चाहते है तो बढ़ती जनसंख्या को नियन्त्रित करना अति आवश्यक है। वर्षा जल का संरक्षण करके तालाबों, बावड़ियों का निर्माण करके वर्षा जल को संचित करने से भूमिगत स्रोतों को पुनः भरा जा सकता है। इन भूमिगत जल स्रोतों के निकट अधिक से अधिक वृक्षारोपण करने से जल की मात्रा बढ़ायी जा सकती है। कल-कारखानों एवं शहरों से निकलने वाले अवशिष्ट पदार्थों को सीधे नदी-नहरों में न बहाकर उनकी अन्यत्र आबादी एवं जल स्रोतों से दूर निष्कासन की व्यवस्था करनी चाहिए। नदियों के जल को शुद्ध करने के लिए जल शोधक संयंत्रों को स्थापित कर के जल उपचार करना चाहिए। जल संरक्षण के प्रति लोगों में जल चेतना या जागृति के लिए व्यापक प्रचार-प्रसार किया जाना अपेक्षित है। प्राथमिक, माध्यमिक विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में जल संरक्षण के लिए पाठ्यक्रम को अनिवार्य कर देना चाहिए। सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठनों की मदद लेकर लोगों तक जन-जागरण अभियान चलाकर इन जल स्रोतों की साफ-सफाई एवं नियमित उपयोग की सलाह देनी चाहिए। नदियों आदि के जल का दुरूपयोग एवं नुकसान पहुंचाने वाले व्यक्तियों के लिए सख्त कानून बनाकर सजा का प्रावधान रखा जाना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को यह अवगत करवाना चाहिए कि संपूर्ण प्राकृतिक जल स्रोतों या जल भण्डार हमारी अमूल्य निधि है। इसकी सुरक्षा एवं सदुपयोग करना हम सभी का परम कर्तव्य है। यही जन चेतना संपूर्ण राष्ट्र को जल संकट से बचाकर जल संरक्षण की ओर ले जाने में अवश्य ही सहायक साबित होगी।

संदर्भ

1. डॉ. पुरोहित भगवती प्रसाद
उत्तराखंड में जल संसाधन प्रबंध,
पृष्ठ-116।
2. वही - पृष्ठ - 116।
3. डॉ. रावल एवं रश्मि रावल
पर्यावरण चिन्तन (साहित्य सेवा संस्थान)
पृष्ठ - 101।
4. डॉ. आस्थाना मधु
पर्यावरण (एक संक्षिप्त परिचय)
पृष्ठ - 115

संपर्क करें :
डॉ. दीपक डोभाल
असि. प्रोफेसर (इतिहास विभाग)
बी.एस.एम. पी.जी. कॉलेज,
रुड़की (हरिद्वार)